अध्याय-3

बादलों की उत्पत्ति, वर्षा और इसका मापन

वर्षा उन तीन मुख्य प्रक्रियाओं (वाष्पीकरण, संघनन, और वर्षा) में से एक है जिनके द्वारा जलविज्ञानीय चक्र, वायुमंडल और पृथ्वी की सतह के बीच पानी का निरंतर आदान-प्रदान, संचालित होता है । इस अध्याय में प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित विभिन्न प्रक्रियाओं जैसे कि बादलों की उत्पत्ति, सूर्य और महासागर और पृथ्वी की सतह के बीच अंतःक्रिया, संघनन और वर्षा पर चर्चा की गई है। यह अध्याय प्राचीन भारत में वर्षा मापन के लिए उपयोग की जाने वाली तकनीकों पर भी प्रकाश डालता है।

मौसम और बादलों की उत्पत्ति

ऋग वैदिक आर्यों ने उत्सुकता और सावधानी से मौसम में बदलाव की सीमाओं को निर्धारित किया है और पूरे वर्ष को इस तरह से छह भागो में विभाजित किया है जैसा श्लोकों में स्पष्ट किया गया है:

उतो स मह्यमिन्दुभिः षड्युक्तो अनुसेषिधत्।
गोभिर्यवं न चर्कृषत्।। आर.वी.,I,23.15 ।।

ऋग वैदिक आर्यों को स्पष्ट रूप से पता था कि सूर्य मौसम का निर्धारक है और पृथ्वी के जीवों के हित के लिए मौसम बनाए गए हैं।

त्रीणि जाना परि भूषन्त्यस्य समुद्र एकं दित्येकमप्सु।
पूर्वांमनु प्र दिशं पार्थिवानामृतूत्प्राशासद्वि दधावनुष्ठु।। आर.वी., I,95.3 ।।

चित्र 3.1 में आधुनिक ज्ञान के अनुसार सामान्य बादलो की उत्पत्ति और संबंधित प्रक्रियाओं को दर्शाया गया है। बादलो की उत्पत्ति के बारे में ज्ञान ऋग्वेद काल में भी मौजूद था।

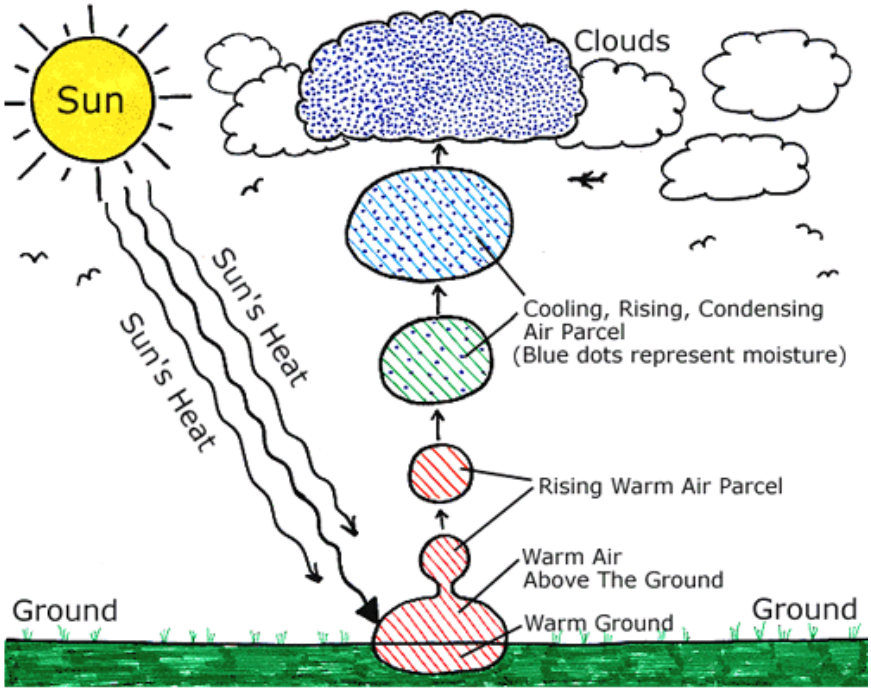

चित्र 3.1: बादलों की उत्पत्ति की प्रक्रिया (स्रोत: https://climate.ncsu.edu/edu/CloudFormation)

विकिरण, संवहन धारायें और उनके परिणाम स्वरूप वर्षा को निम्नलिखित श्लोकों के माध्यम से ऋग्वेद (I,164.47, VII, 70.2 और I, 161. 11-12) में वर्णित किया गया है ।

उद्वत्स्वस्मा अकृणोतना तृणं निवत्स्वपः स्वपस्यया नरः।
अगोस्यस्य यदसस्तना गृहे तद्घोदमृभवो नानु गच्छथ।। आर.वी., I,161.11 ।।

संमील्यं यद्भुवना र्प्यसर्पत क्व स्वत्तात्या पितरा व आसतुः।
अशपत यः करस्नं व आददे यः प्राबवीत्प्रो तस्मा अबवीतन।। आर.वी., I, 161.12 ।।

कृष्णं नियांन हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति।
त आववृत्रन्त्सदनादृतस्यादिद्धृतेन पृथिवी व्युघते।। आर.वी., I, 164.47 ।।

ऋग्वेद के उपरोक्त श्लोकों में यह भी कहा गया है कि सूर्य की किरणें वर्षा का कारण हैं, और बादल विभिन्न तत्वों से गठित होते हैं। ऋग्वेद के कुछ श्लोक (I,27.6; I,32.8; I,32.14; I,37.11; II, 24.4; V, 55.3) सूर्य और हवा द्वारा पानी के वाष्पीकरण द्वारा बादल के गठन और फिर उससे वर्षा का वर्णन करते हैं, और सूर्य के अलावा कोई अन्य वर्षा का कारण नहीं है।

विभक्तासि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा अपाक आ।
सधो दाशुषे क्षरसि।। आर.वी., I, 27.6 ।।

नदं न भिन्ममुया शयानं मनो रूहाणा अतिं यन्त्यापः।
यश्चिद्वत्रो महिना र्प्यतिष्ठत्तासामहिः पत्सुतः शीर्बभूव।। आर.वी., I,32.8 ।।

उपरोक्त श्लोक बताते हैं कि सूर्य की किरणों की गर्मी से सारा पानी हवा के साथ आकाश में चला जाता है और बादलों में परिवर्तित हो जाता है और फिर सूर्य की किरणों के प्रवेश के बाद वर्षा होती है और नदियों, तालाबों, समुद्रों आदि में जमा हो जाती है। कहा जाता है कि पानी की भरपाई के लिए बादल उत्तरदायी हैं। ऋग्वेद के श्लोक V 55.3 में शक्तिशाली बादलों के एक साथ आर्द्रता के गठन की व्याख्या की गई है ।

साकं जाताः सुभवः साकमुक्षिताः श्रिये चिदा प्रतरं बावृधुर्नरः
विरोकिणः सूर्यस्येव रश्मयः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत।। आर.वी.,V,55.3।।

ऋग वैदिक काल के दौरान वर्षा की मौसमी भिन्नता ज्ञात थी, जिसे निम्नलिखित श्लोकों (RV.VI, 20.2 और VI, 30.3) के माध्यम से दर्शाया गया है, जिसमें कहा गया है कि सूर्य आठ महीनों के दौरान पृथ्वी से पानी निकालता है और फिर इसी पानी से चार महीनो के वर्षा काल के दौरान वर्षा होती है ।

दिवो न तुभयमविन्द्र सत्रासुर्यं देवेभिर्धायि विश्वम्।
अहिं यत्दृत्रमयो वव्रिवांसं ह्न्नृजीषिन्विष्णुना सचानः।। आर.वी.,VI,20.2 ।।

ऋग्वेद के श्लोक I, 79.2 के में कहा गया है कि सूर्य की किरणें गतिमान बादलों से टकराती हैं। इस प्रकार, वर्षा वाले काले बादल गर्जन करते हैं । इसके बाद, आकाशीय विद्युत की रमणीय चमक के साथ फुहारे आती है । और अंत में बादलो की गर्जन के साथ वर्षा आती है।

अ ते सुपर्णा अभिनन्तं एवैः कृष्णो नोनाव वृषभो यदीदम्।
शिवाभिर्न स्मयमानाभिरागात्पतन्ति मिहः स्तवयन्त्यभ्रा।। आर.वी.,I,79.2 ।।

ऋग्वेद के आगामी दो श्लोकों (V.54.2 और V55.5) बादलों वाली हवाओं को वर्षा का कारण बताते हैं, यथा

प्रवो मरुतस्तविषा उद्न्यवो वयोवृधो अश्वयुजः परिज्रयः।
सं विघुता दधति वाशाति त्रितः स्वरन्त्यापोइवनापरिज्रयः।।आर.वी.V,54.2 ।।

भावार्थ: “हे मेघ-वायु, तुम्हारी सेनाएँ जल में धनी हैं, वे जीवन की रक्षक हैं, और आपसे उनका मजबूत बंधन हैं, वे पानी और भोजन में वृद्धि करते हैं, और वे उन तरंगों से सुशोभित हैं जो दूर-दूर तक हर जगह फैलती हैं। प्रकाश के साथ मिलकर, तिहरा -समूह (हवा, बादल और बिजली का) जोर से गर्जना करता है, और पृथ्वी पर आस-पास पानी गिरता है ”।

उदीरयथा मरुतः समुद्रतो यूयं वृष्टिं वर्षयथा पुरीषिणः।
न वो दस्त्रा उप दस्यन्ति धनेवः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत।। आर.वी. V,55.5 ।।

इस श्लोक में समझाया गया है कि बादल से चलने वाली हवाएँ समुद्र से पानी उठाती हैं और पानी से परिपूर्ण होकर वर्षा करती हैं। इसी प्रकार, हवाओं को वर्षा का कारण मानने वाले श्लोक I, 19.3-4 ; I, 165.1 में आसानी से पढ़ा जा सकता है; और उनके बादलों के साथ संबंध को ऋग्वेद के श्लोक I, 19.8 में इस प्रकार बताया गया है:

ये महो रजसो विदुर्विश्वे देवासो अद्रुहः। मरुद्भिरग्न आ गहि।।
या उग्रा अर्कमानृचुरनाधृष्टास ओजसा भरुद्भिरग्न आ गहि।। आर.वी. I,19.3-4 ।।

अ ते तन्वन्त रश्मिभिस्तिरः समुद्रमोजसा।
मरुद्भिरग्न आ गहि।। आर.वी.I,19.8 ।।

उपरोक्त दोनों श्लोक वर्षा के कारण को बताते हैं, जो वर्षा के नीचे आने और शाश्वत कानून के क्रियान्वयन का नियंत्रण करते हैं।

ऋग्वेद के निम्नलिखित स्तुति गीत (I,38.7) से पता चलता है कि किस तरह से नमी वाली हवाएँ रेगिस्तान के क्षेत्र में भी कुछ वर्षा लाती हैं।

सत्यं त्वेषा अमवन्तो धन्वञ्चिदा रुद्रियासः।
मिहं कृण्वन्त्यवाताम्।। आर.वी.I,38.7 ।।

ऋग्वेद के श्लोक V 53.6- 7 से हमें ऋग वैदिक आर्यों के वर्षा करने में यज्ञ , वनों और बड़े जलाशयों के सकारात्मक प्रभाव के ज्ञान के बारे में भी पता चलता है।

आ यं नरः सुदानवो ददाशुर्षे दिवः कोशमचुच्यवुः।
वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु धन्वना यन्ति वृष्टयः।।

ततृदानाः सिन्धवः क्षोदसा रजः प्र सस्त्रुर्धेनवो यथा।
स्यन्ना अश्वा इवाध्वनो विमोचने वि यद्वर्त्तन्त एन्यः।। आर.वी.V.,53.6-7।।

ऋग्वेद का निम्नलिखित स्तुति गीत (V,53.17) इंगित करता है कि हवायें त्रेसठ प्रकार की होती हैं । हालांकि, उनके जलवायु और मौसम संबंधी निहितार्थ अभी भी अप्रकाशित हैं और उन्हें केवल पौराणिक कथाओं के रूप में माना जाता है।

सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता दुदः।
यमुनायमधि श्रुतमुद्राधो गत्यं मृजे नि राधो अश्वयं मृजे।।आर.वी.V,53.17 ।।

ऋग्वेद में मानसून का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है, लेकिन मारुत के भजन इसका संतोषजनक विवरण देते हैं। हालाँकि, बाद के काल में यजुर्वेद संहिता में मानसून स्पष्ट रूप से सलिलवात (तैथरिया ।V.4.12.3) के रूप में संदर्भित किया गया है।

वर्च इदं क्षत्र सलिलवातमुग्रम्।।
धर्त्री दिशां क्षत्रमिदं दाधारोपस्थाशानां मित्रवदस्त्वोजः।। टी.एस.,4.4.12.3 ।।

हालांकि, वर्षा वाली हवाओं का एक बेहतर संदर्भ ऋग्वेद (आर.वी.X.137.2 और ।,19.7) में दिया गया है।

द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः।
दक्षं ते अन्य आ वातु परान्यो वातु यद्रपः।। आर.वी.X,137.2 ।।

ऋग्वेद के छंद, VIII, 7.4 में, मिह शब्द का अर्थ है धुंध, जिसे कोई आसानी से वर्षा से भिन्न नहीं कर सकता, यदि मात्रा को ध्यान में रखा जाता है, अन्य स्थानों पर इसका अभिप्राय वर्षा भी होता है।

वपन्त मरुतो मिहंप्रवेपयन्ति पर्वतान। यद्यामं यन्त वायुभिः।। आर.वी.VIII,7.4 ।।

पर्यावरण को शुद्ध करने और वर्षा करने में यज्ञ का महत्व ऋग्वेद (RV.X,98.4; X,98.6 / 12; X.98.7 और X, 98.11) में निम्नानुसार बताया गया है:

आनो द्राप्सा मधुमन्तो विशान्त्विन्द्र देह्याधिरथं सहस्त्रम्।
निषीद होत्रमृतुथा यजस्व देवान्द्रे वाये हविषा सर्प्य।। आर.वी.X.98.4 ।।

अस्मिन्त्समुद्रे अध्युत्तरस्मन्पो देवोभिर्निवृता अतिष्ठन्।
ता अद्रवन्नाष्टिंणेन सृष्टा देवापिना प्रेषिता मृक्षिणीषु।।आर.वी.X.98.6/12 ।।

ये भजन स्पष्ट रूप से वर्णन करते हैं कि सूर्य की किरणों द्वारा एकत्रित पानी को आकाश में सुरक्षित रूप से रखा जाता है, और वर्षा पैदा करने के लिए, किसी को जानकार पुजारी की मदद लेनी चाहिए, जो वर्षा के लिए उचित यज्ञ करेंगे। इसका तात्पर्य है कि वर्षा मौसम और बादल गठन का परिणाम है । अन्य तीन वेद, अर्थात् साम, यजुर और अथर्ववेद जलवायु विज्ञान और मौसम विज्ञान के बारे में कुछ अतिरिक्त जानकारी प्रस्तुत करते हैं जो ऋग्वेद में नहीं है। चूँकि ये तीनों वेद कालक्रमानुसार बाद के काल के हैं, इसलिए यह आसानी से देखा जा सकता है बाद के वैदिक काल में जल विज्ञान ने काफी आगे तक प्रगति की।

यह कि समुद्र, हवा और नमी की एक घटना है वर्षा, यह बाद के वैदिक काल से स्पष्ट रूप से ज्ञात था। तैथरिया के श्लोक में कहा गया है ,"हे मारुत तुम समुद्र से वर्षा गिराते हो, जो नमी से भरपूर हैं (TS.II, 4.8.2)"।

वृष्टयः उदीरयथा मरुतः समुद्रतो दूयं वृष्टिं वर्षयधा पुरीषिणः।
सृजा वृष्टिं दिव अद्रिभः समुद्रं पृण।। टी.एस.II,4.8.2 ।।

तैथरिया में, यह भी स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि वायु परिसंचरण वर्षा के होने में एक निश्चित भूमिका निभाता है। यह इस प्रकार कहा गया है: "वस्तुतः विविध रंगों जैसे होकर वे (पवन) परजन्या से वर्षा करते हैं (TS, II 4.9.I)।

मारुतनसि मरुतामोज इति कृष्णं वासः कृष्णंतूषं परि धत्त् एतद्वै
वृष्टये रुषं सरुप एव भूत्वा पर्जन्यं वर्षयति रमयत मरुतः श्येनमायिनमिति पश्चाद्वातं
प्रति मीवति पुरोवातमेव जनयति वर्षस्यावरुद्धयै वातमामानि जुहोति वायुर्वे वृष्टया ईशे
वायुमेव स्वेन भागधेयेनोप धावति स एवास्मै पर्जन्यं वर्षयस्य ष्टौ।। टी.एस.II,4.9.1 ।।

पश्चिम की हवा और वर्षा धारण करने वाले मानसून या पूर्व की हवा के विषय में इन पंक्तियों में बताया गया है - "हे मारुत रुको, तेज बाज़ (इन शब्दों के साथ), वह पश्चिम हवा को पीछे धकेलता है: वास्तव में वह वर्षा करने के लिए पूर्वी हवा पैदा करता है । वह हवा के नाम की पेशकश करता है, हवाएं वर्षा को नियंत्रित करती हैं (TS.II, 4.9.1)।

ऋग्वेदिक समय के दौरान, शायद आर्यों को यह भी पता था कि पौधों (या जंगलों) का वर्षा के होने पर कुछ प्रभाव था।

सौभययैवाह्त्या दिवो वृष्टमव रुन्धे मघुषा सं यौत्यपां वा एष ओषधीनां रसो
यन्मध्वभदय एवौषधीभयो वर्षत्यथो अद्भय एवौषधीभयो वृष्टिं नि नयति।। टी.एस.II,4.9.3 ।।

ऋग्वेद की तरह, यजुर वेद भी हवा, पानी और सम्पूर्ण पर्यावरण को शुद्ध करने में यज्ञ (बलिदान) के प्रभाव के बारे में बताता है, जो वर्षा के होने में मदद करता है। यजुर वेद के स्तोत्र ।,12 इस प्रकार हैं:

पावत्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाभयाच्छिदेण पवित्रेण सूर्यस्थरश्मिभिः।
देवीरापोअग्रेगुवोअग्रेपवोग्रइममघ यज्ञनयताग्रे यइपतिंसुधातु यज्ञपतिंदेवयुवम्।। वाई.वी.I,12 ।।

इस मंत्र (भजन) में कहा गया है कि जल, वायु आदि पदार्थ प्रदूषित हो जाते हैं और यदि वे आग (यज्ञ की मदद से) से छोटे छोटे कणों में टूट जांयेंगे तो वे शुद्ध हो जायेंगे और शुद्ध वर्षा होगी । यजुर वेद के भजन VI.10 में कहा गया है कि यज्ञ में प्रयुक्त सामग्री सूर्य के आकर्षण के कारण छोटे छोटे परमाणुओं में विभाजित हो जाती है और आकाश में चढ़ जाती है । इससे भरपूर वर्षा होती है । इसी तरह तथ्यो को यजुर वेद के VI - 16 और XIII-12 भजन में भी इस प्रकार प्रकट किया गया है:

अपां पेरुरस्यापो देवीः स्वदन्तु सवात्तं चित्सद्देवहविः।
सं तेप्राणो वातेन गच्छर्तो समङ्गानि यजत्रैः सं यज्ञपतिराशिषा।। वाई.वी.VI,10 ।।

वेदों में कई स्थानों पर धुंध को नीहार की संज्ञा इस प्रकार दी गयी है (वाजसनेयी संहिता 17.31):

नतंविदाथ य इमा जजानान्यघुष्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेणप्रावृता जल्पा चासृनृप उक्थशासश्चरन्ति।। वी.एस. XVII,31 ।।

यजुर वेद में जल निकायों और महासागरों पर धुंध या कोहरे की अपार सघनता के बारे में ज्ञान था "आप धुंध से भरे महासागर हैं"। यह भी ज्ञान था कि शुद्ध पानी वर्षा के माध्यम से सभी चीजों को शुद्ध करता है “संभवतः जल, माँ के सामान हमारे शरीरो को शुद्ध करता है (YV.IV.2-3)।

आपो अस्मान्मातरः शुध्रयन्तु घृतेन घृतप्वः पुनन्तु।
विश्व हि रिप्रं प्रवहन्त देवीः।

उदिदाभयः शुचिरा पूत एमिदीक्षातपसोस्तनूरसि
तां त्वा शिवा शग्मा परि दधे भद्रं वर्ण पुष्यन्।। वाई.वी.IV.2 ।।

सूर्य को बादलों के फैलाव और वर्षा के कारण के रूप में जाना जाता था "हे सूर्य, तुम पृथ्वी के विभिन्न भागों में वर्षा लाते हो "

महीनां प्योसि वचोदा असि वर्चो मे देहि।
वृत्रस्यासि कनीनकरचक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहिं।। वाई.वी.IV,3 ।।

साम वेद वर्षा के भगवान को लुभाने पर अधिक जोर देता है। यह स्पष्ट रूप से कहता है कि सूर्य की शाश्वत शक्ति बादलों में प्रवेश करती है और इस तरह वर्षा का कारण बनती है (एस.वी.पूर्व ॥. 179)। यह भी बताया गया है कि सूर्य हवा की मदद से घुमती पृथ्वी पर वर्षा का पानी बरसाता है (एस.वी.पूर्व॥. 148) यथा ;

यदिन्द्रो अनयाद्रितो महीरयो वृषन्तपः।।
तत्र पूषा भुवत्सचा।। एस.वी.पूर्व II.179 ।।

इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृ त्राण्यप्रतिष्कुतः।
जधान नवतीर्नव।। एस.वी.पूर्व II. 148 ।।

साम वेद के अन्य श्लोक (V.562; अंतिम V.906; और अंतिम X.1317) वर्षा की प्रक्रिया के साथ भगवान की दया और महानता और शक्ति पर चर्चा करते हैं। श्लोक SV अंतिम, XX.1802 में स्पष्ट रूप से भगवान द्वारा भारी वर्षा के कारण महासागरों, नदियों आदि के निर्माण का उल्लेख है।

असावि सोर्मो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत्।
पुनामो वारमत्येष्यव्ययं श्येनो न योनि घृतवन्तमासदत्।। एस.वी.पूर्व,V.562 ।।

आ पवमान सुष्टुति वृष्टि देवोम्यो दुवः।
इषे पवस्व संयतम्।। एस.वी.अंतिम,V.906 ।।

त्व सिन्धू खासृजोधराचो अहन्नहिम्।
अशत्रुरिन्द्र जज्ञिसे विश्वंपुष्यसि वार्यम्।
तन्त्वा परि ष्वजामहे नभन्तामन्थकेषां ज्यांकाअधिधन्वसु।।एस.वी.अंतिम,XX.1802 ।।

अथर्ववेद में हमें इसी तरह की अवधारणाओं और जलविज्ञान संबंधी ज्ञान मिलता है जैसा अन्य वेदों में निहित हैं। उदाहरण के लिए, श्लोक (I,4.3), इस प्रकार है:

अपोदेवी रुपं ह्वये यत्र गावः पिवन्त नः।
सिन्धुभयः कर्त्व हविः।। ए.वी.I,4.3 ।।

इस श्लोक में सूर्य की किरणों के ताप से वाष्पीकरण और बाद में जीवन देने वाली वर्षा की अवधारणा का पता चलता है। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त (XII,1.51) में एक हिंसक धूल भरे तूफ़ान के बारे में वर्णन है, जो पेड़ों को उखाड़ फेंकता है और इसे मातरिश्वा: कहा गया है ।

यां द्विपादः पक्षिणः संपतन्त हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि।
यस्यां वातो मातरिश्येयते रजांसि कृण्वंच्यावयंश्च वृक्षान्।
वातस्य प्रवामुपवामनुवात्यर्चिः।। ए.वी..XII,1.5 ।।

ऋग्वेद के विभिन्न भजनों से संकेत मिलता है कि वैदिक साहित्य पौराणिक रूप से भारतीय वायुमंडलीय घटनाओं, विशेष रूप से मानसून और वर्षा ऋतु के मौसम और आमतौर पर उनके साथ आने वाली प्रचंड आंधी तूफान का वर्णन करता है ।

ऋग्वेद के बाद, सतपथ ब्राह्मण में भी तिरसठ प्रकार की हवाओं को माना गया है, (SB भाग ।2.5.1.13)। उसी पाठ में सफ़ेद पाले को पश्वा नाम से पुकारा गया है ।

त्रिः प्रष्टत्वा मरुतो वावृधाना उस्त्रा इव राशयो यज्ञियासः।
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मं त एना ह्विषा विधेम।। आर.वी. VIII,96.8 ।।

तैथिरिया अरण्यका (I.9.8) में कहा गया है कि वायुमंडल में सात प्रकार की वायु धाराएं या हवाएं हैं जो उसी तरह के सात प्रकार के बादल पैदा करती हैं। ये हैं (1) वराहव (2) स्वतपस (3) विधन्महस (4) धूपम (5) श्वापय (6) गृहमेघ और (7) आशिमिविद्विष। वराहव उन परिस्थितियों का निर्माण करता है जो संघनन और अच्छी वर्षा के लिए जिम्मेदार हैं। स्वतपस वह है, जिसके तापमान की स्थिति पर ऊष्मा या सूर्य का बहुत कम प्रभाव पड़ता है और शायद यह अधिक ऊंचाई पर होता है और वर्षा के लिए जिम्मेदार होता है। मंत्र का मूलपाठ इस प्रकार है:

तातनुक्रमिष्यायः वरावस्स्वतपसः	।	विघुन्मय सो धूपयः।।
श्वापयोगृहमेघाश्वेत्येते	।	पे चेमेशिमिविद्विपः।
पर्जन्यास्सप्त पृथिवीममि वरषन्ति	।	वृष्टभिरति।। ताई.अरा..,I,9.8 ।।

विघुन्महस आंधी को जन्म देता है; धूपम में कुछ गुप्त गुण या सुगंध होती है जो यह जल्दी से विस्तार कर उन वस्तुओं को प्रदान करता है जिनके साथ यह संपर्क में आती है, और

गृहमेघ वातावरण की नमी या आर्द्रता को प्रभावित करता है। ये छह एक ही वंश के हैं और एक ही या समान गतिविधि क्षेत्र रखते हैं । आशिमिदिद्विष का संबंध अन्य वंश से है और उसका भौगोलिक प्रदेश या क्षेत्र पूर्ववर्ती छह से अलग है; हालांकि, यह कृषि उद्देश्यों के लिए अत्यधिक अनुकूल है। बादलों के ये सात वर्ग सात प्रकार की हवाओं के साथ वर्षा लाते हैं। तैथिरिया अरण्यक के पद I.10.9 में, दो और प्रकार के बादलों का उल्लेख किया गया है (ताई, आरा, I, 10.9)। ये हैं: (1) शम्बर या शाम्बर और (2) बहुसोमगी – पहले वाला प्रचुर वर्षा के लिए जिम्मेदार है, और बाद वाले को "पानी के गतिमान वर्षा मेघ झरने " के रूप में पहचाना जाता है। इस प्रकार, उनके गुणों के साथ कुल नौ प्रकार के बादलों को तैथिरिया अरण्यका में पहचाना गया है।

सवितारं वितन्वन्तम्। अनुवध्नाति शाम्वरः । आपपूरषम्ब्रश्वैव।
सवितांरेपसोभक्त।। I,10.8 ।।

त्यं सुतप्तृं विदित्वैव। बहुसोमगीरं वशी।।
अन्वेति तुयोवाक्रियां तम्। आ यसूयान्श्सोमतृप्सूषु।। ताई.अरा.,I,10.9 ।।

इसी प्रकार से, महाकाव्यों के दौरान हमें बादलों, वर्षा, वाष्पीकरण, हिम, तूफानों आदि के बारे में जानकारी मिलती है। रामायण के छंद VII.4.3 में तीन प्रकार के बादलों के बारे में बताया है - ब्राहम (ब्रह्मा से उत्पन्न), अग्नेय (अग्नि से उत्पन्न) और पक्षज (एक पर्वत गुच्छे पर निर्मित)। सफ़ेद, लाल, नीले और स्लेटी बादलों का भी उल्लेख महाकाव्य (V.1.81) में इस प्रकार किया गया है:

पाण्डुरास्णवर्णानि नीलमाज्मिष्ठकानि च।
कपिना कष्यमाणनि महाभ्राणि चकाशिरे।। राम. V,1.81 ।।
हरितास्णवर्णानि महाभाणि चकाशिरे।। राम. V,57.7 ।।

जलवायु संबन्धी अनपेक्षितता या वर्षा की अनुपस्थिति का उल्लेख रामायण (I.9.9) में इस प्रकार किया गया है:

अनावृष्टिः सुघोरा वै सर्वलोकभयावहा।। राम. I,9.8 ।।
अनावृष्ठयां तु वृत्तायां समानीय प्रवक्ष्यति।। राम. I,9.9 ।।

यहाँ, यह अप्रत्यक्ष रूप से धूल, कोहरे, पाले और धुंध से मुक्त वातावरण की बात करता है। इसी तरह, निशाचर आकाश (नीहार या तुषार से चंद्रमा) की स्थिति का रामायण (I.29.25) में उल्लेख इस प्रकार किया गया है:

शशीव गतनीहारः पुनर्वसुसमन्वितः।। राम. I,29.25 ।।

धुंध और तापमान में वृद्धि के माध्यम से इसके गायब होने का उल्लेख रामायण के ।, 55.25 श्लोक में, धुंध और भीषण ठंड का उल्लेख ।।। 16.12 में, पश्चिमी ठंडी हवाओं के उसके (पाले) कारण और ठंडी होने का उल्लेख ।।।, 6.15 में, पृथ्वी की सतह के आसपास के क्षेत्र में बहुत घनी धुंध का उल्लेख ।।।. 16.23 में , नदी संरचना की सतह पर लटकी पानी वाष्प का उल्लेख ।।। ,16.24 में , किनारों की रेतीली सीमाओं पर ओस के गठन का उल्लेख ।।।, 16.24 में और बर्फबारी का उल्लेख ।।। , 16.25 में किया गया है । ये श्लोक यहाँ दिए गए हैं:

वदतौ वै वसिष्ठस्य या भैरिति मुहुर्मुहुः।
नाशायाम्यघः गाधेयंनीहारमिव भास्करः।। राम. I,55.25 ।।

निवृत्ताकाशशयनाः पुष्यनीता हिमारुणाः।
शीतवृद्वतरायामास्त्रियाना यान्ति साम्प्रतम्।। राम. **III,16.12** ।।

प्रकृत्या शीतलस्पर्शो हिमविद्वश्च साम्प्रतम्।
प्रवाति पश्चिमो वायुः काले द्विगुणशीतलः।। राम. **III,16.15** ।।

अवश्यायतमोनद्वा नीहारतमसावृताः।
प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्या वनराजयः।। राम. III,16.23 ।।

वाष्पसंक्षन्नसलिला रुतविज्ञेयसारसाः।
हिमद्रिवालुकैस्तीरैः सरितो भान्ति साम्प्रतम्।। राम. III,16.24 ।।

तुषारपतनाच्चैव मृदुत्वाद् भास्करस्य च।
शैत्यादगाग्रस्थमपि प्रायेण रसवज्जलम्।। राम. III,16.25 ।।

रामायण के श्लोक ।V, 1.15 में पहाड़ी हवाओं के बारे में बताया गया है। एक अन्य श्लोक (VI, 78.19) में हम धूल भरी, सूखी और झोके वाली हवा के बारे में पढ़ते हैं । बाद में रामायण (VI, 106.21) में प्रचण्ड तूफान या बवंडर का भी उल्लेख किया गया है (VI,106.21, वाता मण्डिलनस्तीवा:।

शैलकंदर निष्क्रान्तः प्रगीत इव चानिलः।। राम. IV,1.15 ।।

रामायण की तरह, महाकाव्य महाभारत में भी जल विज्ञान से संबंधित बहुमूल्य जानकारी है । महाकाव्य के बारहवें स्कंद (स्कंद, क्षेत्र, XII, 328.31) में वायु-मंडल को सात क्षेत्रों में विभाजित किया गया है और "वह वायु जो ऊपर दिए नम्बरों में पहले स्थान पर है और जिसे पवह नाम से जाना जाता है, पहले क्रम के साथ, धुएं और गर्मी से पैदा हुए बादलों को संचालित करती है । इस प्रकार, इस समय के दौरान, बादलो के घटको का भी पूर्वानुमान था। यह हवा आकाश से गुजरती है और बादलों में पानी के संपर्क में आती है (एम.बी. .XII, 328.36) इस प्रकार है:

पृथिव्यायन्तरिक्षे च यत्र संवान्त वायवः।
सप्तैतेवायुमार्गा वै तान् निवोधानुपूर्वशः।। एम.बी. XII,328.31 ।।

प्रेरयत्यभ्रसंधातान धूमजांश्चोष्मजांष्व यः।
प्रथमः प्रथमे मार्गे प्रवहो नाम योनिलः।। एम.बी. 328.36 ।।

दूसरी वायु जिसे आवह कहा गया है, तेज आवाज के साथ बहती है (एम.बी. . XII329.37)। जो हवा चारों महासागरों से पानी पीती है और उसे चूसती है, इसे बादलों को देती है, उन्हें वर्षा के देवता के सामने प्रस्तुत करती है, यह तीसरे नंबर पर है और इसे उत्दह के रूप में जाना जाता है (एम.बी. . XII328.38-39-40)।

अम्बरे स्नेहमम्येत्य विधुदभयश्च महाघुतिः।
आवहो नाम संमवाति द्वितीयः श्वसनो नदन्।। एम.बी. .XII,328.37 ।।

उदयं ज्योतिषां शश्वत सोमादीनां करोति यंः।
अन्तर्देहेषु चोदानं यं वदान्त मनीषिणः।। एम.बी. .XII,328.38 ।।

यश्चतुभर्यः समुद्रेभयो वायुर्धारियते जलम्।
उद्वत्याददते चापो जीमूतेम्योम्बरे बिल।। एम.बी. ,XII,328.39 ।।

योदिभः संयोज्य जीमूतान पर्जन्याय प्रथच्छति।
उत्दतो नाम बंहिष्ठस्तृतीयः स सदागतिः।। एम.बी. ,XII,328.40 ।।

हवाएँ जो बादलों का सहारा देती हैं और उन्हें विभिन्न भागों में विभाजित करती हैं, जो उन्हें वर्षा करने के लिए पिघला देती हैं और उन्हें एक बार फिर जमा देती हैं, जिन्हें बादलों की गर्जना वाली आवाज़ के रूप में पहचाना जाता है, उन्हें संवह नाम से जाना जाता है- पांचवीं परत

को विवह कहा जाता है और छठी को परिवह कहा जाता है। सातवी परत जिसे परावह कहा जाता है शायद कुछ लौकिक क्षेत्र को संदर्भित करती है (एम.बी. .XII.328.41-42-43-47-48) ।

समूहयमाना बहुधा येन नीताः पृथक घनाः।
वर्षमोक्षकृतारम्भास्ते भवन्ति घनाघनाः।। एम.बी.XII,328.41 ।।

संहता येन चाविद्वा भवन्ति नदतं नदाः।
रक्षणार्थाय सम्भूता मेघत्वमुपयान्ति च।। एम.बी.XII,328.42 ।।

यो सौ वहति भूतानां विमानानि विहायसा।
चतुर्थः संवहो नाम वायुः स गिरिमदिनः।। एम.बी.XII,328.43 ।।
दारुणोत्यातसंचारो नभसः स्तनयित्नुमान।
पज्चमः स महावेगो विवहो नाम मारुतः।। एम.बी.XII,328.48 ।।

षष्ठः परिवहो नाम स वायुर्जयतां दरः।। एम.बी.XII,328.45 ।।

येन स्पृष्टःपराभूतो यात्येव न निवर्तते।
परावहो नाम परो वायुः स दुरतिक्रमः।। एम.बी.XII,328.52 ।।

यहां, पांच स्थानों पर, प्रयुक्त किये गये पारिभाषिक शब्द हवा का वास्तविक अर्थ एक गोला या परत है। ये पांच नाम पुराणों और अन्य बाद के साहित्य में भी पाए गए हैं। महाकाव्य बादलों के चार वर्ग देकर भी बादलों का एक और वर्गीकरण देता है। बादलों के चार प्रकार हैं संवर्तक, वलाहक (एम.बी. , VIII, 34.28), कुण्डधार (XII 271.6) और उतंक (एम.बी. XIV 55.35-36-37)। वलाहक बादल वायुमंडल की विवह परत (पहले वर्णित) में बनते हैं। रेगिस्तानी क्षेत्र में वर्षा लाने वाले बादलों को उतंक कहा जाता है। बादलों का ये वर्गीकरण रामायण और पुराणों में वर्णित वर्गीकरण से अलग है।

सोथ सौम्येन मनसा देवानुचरयन्तिके।
प्रत्यष्यज्जलधरं कुण्डधारमवस्थितंम्।। एम.बी. ,XII,271.6 ।।

तदा मरौ भविष्यन्ति जलपूर्णाः प्योधराः।
रसवच्च प्रदास्यन्ति तोयं ते भगुनन्दन,
उत्तक्ड़मेघा इत्युक्ताः ख्याति यास्यन्ति चापि ते।। एम.बी.,XIV,55.36 ।।

लगभग 600-700 ईसा पूर्व में, कणाद ने अपने वैशिका सूत्र में पानी की संघनन और विघटन प्रक्रिया का उल्लेख किया है (वैस. सूत्र, 2.8)। उन्होंने टिप्पणी की है "पानी का संघनन

और विघटन आग या गर्मी के साथ संयोजन के कारण है"। मेघगर्जन की घटना के बारे में, उनका कहना है कि " मेघगर्जन आकाश के प्रकाश के प्रवेश का एक निशान है (वैस.सूत्र,.V, 2.9)", यानी यह मेघ गरजना है जो प्रवेश का अधिकार देती है। वह फिर कहता है (वैस.सूत्र. वी, 2.11) कि मेघगर्जन के परिणामस्वरूप पानी के साथ संयोजन और बादल से विघटन होता है। यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि महान ऋषि जानते थे कि मेघगर्जना धनात्मक और ऋणात्मक आवेशित के बादलो के प्रभाव के कारण होती है।

अपां सङ्घातो विलयनज्च तेजः संयोगात्।। वै.सूत्र V,2.8 ।।
तत्र विस्फूर्ज थुर्लिङ्गम्।। वै.सूत्र V,2.9 ।।
अपां संयोगाद्विभागाच्च स्तनयित्नोः।। वै.सूत्र V,2.11 ।।

वर्षा की बूंदों के गिरने और धाराओं के प्रवाह पर चर्चा करते हुए, उन्होंने आगे संयोजन के अभाव में गुरुत्वाकर्षण से पानी के गिरने के कारणों को प्रस्तुत किया है (वैस.सूत्र. वी, 2.3) अर्थात वर्षा के रूप में पानी के गिरने में, गुरुत्वाकर्षण गैर-संयोगी कारण है।

अपां संयोगाभावे गुरुत्वात् पवनम्।। वै.सूत्र V,2.3 ।।

श्लोक V 2.4, में यह कहा गया है कि धारा या गिरते हुए पानी या वर्षा की बूंदों के आपसी संयोजन से बनी विशाल जलीय इकाई का दूर दूर तक प्रगमन, गुरुत्वाकर्षण के यथार्थ कारण और तरलता के गैर- संयोगी कारण द्वारा निर्मित होता है।

द्रवत्वात स्यन्दनम्।। वै.सूत्र V,2.4 ।।

वाष्पीकरण, बादल बनने, बादलों के वर्गीकरण और हवाओं या वायुमंडल के क्षेत्रों (वातस्कन्ध) के साथ उनके संबंधो पर भी कई पुराणों (वायु अध्याय 51, लिंगा खंड 1, अध्याय 36, मत्स्य खंड.। अध्याय 54) में काफी संतोषजनक रूप से चर्चा की गयी है। बादलों की सामान्य उत्पत्ति के बारे में बताते हुए वायु पुराण (51.22-25) में कहा गया है कि दुनिया की सभी चल या अचल वस्तुओं में नमी होती है और आतपन या सूर्य की किरणों के कारण उस नमी का वाष्पीकरण होता है और इस प्रक्रिया से बादलों की उत्पत्ति होती है। अर्थात

आर्क तेजोहिभूतेभयोहयादत्ते रश्मिमर्जलम्।। वायु,51.23 ।।

मेघानां पुनरुत्पत्तिस्त्रिविधा योनिरुच्यते।
अग्नेया ब्रह्मजाश्चैव वक्ष्यामि पृथाविधाः।
त्रिधा घनाः समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि संभवम्।। वायु 51.28 ।।

अग्नेयास्त्वर्णजाः प्रोक्तास्तेषां तस्मात्प्रवर्तनम।
शीत दुर्दिनवाता ये स्वगुणास्ते व्यवस्थिताः।। वायु 51.29 ।।

जीमूता नाम ते मेघा येभयो जीवस्य संभवाः।
द्वितीयं प्रवहं वायु मेघास्ते तु समाश्रिताः।। वायु 51.36 ।।

उपरोक्त श्लोको में बताया गया है कि जो बादल पानी देते या छिड़कते हैं, उन्हें मेघ के कहते हैं और जो कोई भी वर्षा को नहीं करते उन्हें अभ्र के रूप में जाना जाता है- तीन प्रकार के बादल होते हैं (1) आग्नेय (2) ब्रहमज (3) पक्षज। ये क्रमशः चक्रवात (गर्मी और सूर्यविकिरण सम्बन्धी) संवहनीय (उत्तरी महाद्वीप, साइबेरिया और भूमध्यरेखीय क्षेत्र में होने वाली) और पर्वतीय (पर्वत के पार्श्व भाग में घटित और आगे बढ़ने वाली) वर्षा के प्रकार हैं। उपर्युक्त पुराणों के अनुसार, आग्नेय सर्दियों के मौसम में होती है और यह बिजली की चमक और गड़गड़ाहट से रहित होती है और इसका विस्तार बहुत अधिक होता है और पहाड़ के तलहटी क्षेत्रों में होती है। यह एक या दो मील के दायरे में वर्षा लाती है। यह विवरण आधुनिक दिनों के निम्बस (वर्षा मेघ) के बहुत निकट है। बहमज बादलों की संवहन धाराओं के कारण उत्पन्न होते हैं। वे लगभग एक योजन (पाँच या आठ मील) त्रिज्या के क्षेत्र में वर्षा करते हैं। संभवत: ये क्यूम्यलोनिम्बस हैं। पुस्करा-वर्तक (पश्वरावत) बादलों का उद्गम पहाड़ों के पंखों (पक्षसभवा)से या पहाड़ो में होता है । उनके अनेक रुप होते हैं और वे गहरी ध्वनि का उत्पन्न करते हैं। वे विपुल जल से भरे होते हैं और अत्यधिक वर्षा लाते हैं जो अत्यंत विनाशकारी होती है। यह विवरण काफी हद तक आधुनिक वर्ग के अल्टोस्ट्रेटस के अनुरूप है।

मत्स्य पुराण (भाग ।, अध्याय.54) भी बादलों के बारे में और अधिक विस्तृत और वैज्ञानिक जानकारी प्रस्तुत करता है। इसमें कहा गया है कि बादलों के कारण जीवन है। ये बादल अवहा नामक वायु पर लटके रहते हैं । वे आकार बदलते रहते हैं और एक योजन तक जाते हैं तथा वर्षा का रूप लेते हैं। उन्हें वर्षा का स्रोत कहा जाता है (श्लोक10)। अगर श्लोक 17,18 और 19 की लाक्षणिक रूप से व्याख्या की जाए, तो वे नामकरण के अनुसार बादलों के

चार अन्य वर्ग देते हैं , गज, पर्वत, मेघ और भोगी। श्लोक 17 में गज बादलों के चार और वर्गों को पहचाना जा सकता है।

विषुवद्गहवर्णश्च सर्वमेतद ध्रुवेरितम्।
जीमूता नाम ते मेघा यदेभयो जीव सम्भवः।। मत्स्य, I,54.9 ।।

द्वितीय आवहन वायुर्मेघास्ते त्वभिसंश्रिताः।
इतोयोजनमात्राच्च अध्यर्द्धविकृताअपि।। मत्स्य,**I,54.10** ।।

तेषामप्यायनं धूमः सर्वेषामविशेषतः।
तेषां श्रेष्ठश्च पर्जन्यश्चत्वारश्चैव दिग्गजाः।। मत्स्य,I,54.17 ।।

गजानां पर्वतानाज्च मेघानां भोगिभिः सह।
कुलमेकं द्विधाभूतं योनिरेका जलं स्मृतम्।। मत्स्य,I,54.18 ।।

पर्जन्य और दिग्गज हेमंत ऋतु में वर्षा करते हैं और वे कृषि विकास के लिए बहुत उपयोगी हैं, नीचे दिए गए श्लोक में कहा गया है:

पर्जन्योदिग्गजाश्चैवहेमन्ते शीतसम्भवम्।
तुषारवर्ष वर्षान्ति वृद्वां ह्यन्नविवृद्वये।। मत्स्य,I,54.19 ।।

मत्स्य पुराण (I, 54.33) में संक्षेप में आर्द्रताग्राही नाभिक पर संघनन और वर्षण की प्रक्रिया बहुत सावधानी से वर्णित है:

नियच्छत्यापो मेधेभवः शुक्लाः शुक्लैस्तुरश्मिभिः।
अभ्रस्थाः प्रयतन्त्यापोवायुनासमुदीरिताः। मत्स्य,I,54.33 ।।

अर्थ: "बादलों से पानी (वाष्प) हवा (अर्थात् वायु की आर्द्रताग्राही सामग्री) के संपर्क में आने पर वर्षा के आकार में गिरता है"।

विष्णु पुराण (II, 9.11-12) बहुत ही वैज्ञानिक रूप से वायुमंडलीय नमी के चार स्रोतों, "गौरवशाली सूर्य, मैत्रेय, चार स्रोतों अर्थात् समुद्र, नदियों, पृथ्वी और जीवित प्राणियों से आर्द्रता का वर्णन करता है।"

अभ्रस्था प्रपतन्त्यापो वायुना समुदीरिताः।
संस्कारं कालजनितं मैत्रैयासाघ निर्मलाः।। विष्णु,II,9.11 ।।

सरत्ससमुद्रभौमास्तु तथापः प्राणिसम्भवाः।।
चतुष्प्रकाश भगवानादन्ते सविता मुने।। विष्णु,II,9.12 ।।

प्रसिद्ध कवि कालीदास (100 ई.पू.) भी बादलों और संबद्ध घटनाओं के बारे में बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने इस प्रकार बादल को परिभाषित किया है "यह धुएं, बिजली, पानी और हवा का एक संयोजन है" (पूर्वामेघ श्लोक 5)। अन्य स्थानों पर (पूर्वामेघ, श्लोक 6) कवि ने दो प्रकार के बादलों का नाम दिया है यथा पुष्कर और आवर्तक ।

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्नपातः व्क मेघः।
सन्देशार्था व्क पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।। मेघदूतम, पूर्वामेघ 5।।

जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरुपं मघोनः मेघदूतम, पूर्वामेघ 6 ।।

मृच्छकटिका (600 ई.) एक प्रकार के बादल को संदर्भित करता है जिसमें से एक बाल्टी की तरह वर्षा निकलती है। एक अन्य संदर्भ में, प्रसिद्ध नाटक एक द्रोणिका से निकलने वाली एक विशेष प्रकार की वर्षा द्रोणवृष्टि को संदर्भित करता है (X.39)।

कोयमेवंविधे काले कालपाशास्थिते मयि।
अनावृष्टिहते सस्ये द्रोणमेघं इवोदितः।। मृच्छकटिका, X.26 ।।

केयमभयुघते शस्त्रे मत्युवक्त्रगते मयि।
अनावृष्टिहते सस्ये द्रोणवृष्टिरिवागता।। मृच्छकटिका,X.39 ।।

कालिदास द्वारा कुल मिलकर चार प्रकार के बादलों की बात की गई है। वे हैं आवर्त, संवर्त, पुष्कर और द्रोण । आवर्त वर्षा नहीं लाता है; संवर्त वर्षा बहुतायत में देता है, पुष्कर वर्षा की बाढ़ का कारण बनता है और द्रोण कृषि और मानव जाति के लिए सबसे अधिक अनुकूल है। यह संक्षेप में निम्नलिखित पंक्तियों में कहा गया है –

आवर्तो निर्जलो मेघः संवर्ततश्च वहूदकः।
पुष्करो दुष्करजलो द्रोणः शस्यप्रपूरकः।।
कालिदास ग्रंथावली,अभिदान कोष,P.154 ।

सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के पुस्तकालय (सरस्वती भवन पुस्तकालय) में एक पांडुलिपि ग्रंथ, जिसका शीर्षक मेघमाला है, उपलब्ध है। जैसा कि नाम से ही पता चलता है, यह जलवायु विज्ञान और विशेषकर बादलों के विज्ञान का एक ग्रन्थ है । संवाद की सामग्री और शैली के आधार पर त्रिपाठी (1969) ने यह स्थापित करने की कोशिश की है कि मेघमाला रुद्रायमालतंत्रम (लगभग 900 ईस्वी) का एक हिस्सा है; मेघमाला के 11 अध्याय हैं। मेघमाला का पहला अध्याय अन्वेषण के साथ प्रारंभ होता है।

मेघस्तु कीदृशादेव कथं विद्युत्प्रजायते।
कीदृशं वर्णरूपं तु शरीर तस्य कीदृशम्।।

(मेघमाला, पांडुलिपि संख्या 37202, सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी)

पहला अध्याय यह बताता है कि बादल क्या हैं, बिजली कैसे पैदा होती है, प्रकृति, बनावट सामग्री और बादलों के रंग क्या हैं? बाद में श्लोक 20,21,22 में पारंपरिक रूप से भारतीय शैली में वर्णन किया गया है कि पहाड़ बादलों को नियंत्रित करते हैं। श्लोक 32 से 68 तक हम पता चलता है कि बादलों के बड़े विभाजन में बारह प्रजातियां शामिल हैं और उन्हें 1- सुबुध 2- नंदशाला 3- कन्यद 4- पथुश्रवा 5- वासुदी 6- तक्षक 7-वकर्त 8- सारवत 9- हेमकाली 10- जलेंद्र 11- वज्रदंष्ट और विष्णुप्रभ- के रूप में नामित किया गया है। लेकिन इनका कोई वैज्ञानिक विवरण सुसज्जित नहीं है। अध्याय ॥ विभिन्न वर्षों की, उनकी वर्षा और उनमें से प्रत्येक की आर्थिक विशेषताओं या स्थितियों को संदर्भित कर प्रत्येक पर प्रकाश डालता है। तीसरा अध्याय वर्षा, जलवायु विज्ञान और मनुष्यों की आर्थिक स्थिति, राज्य की बहुतायत एवं कमी की स्थिति और विभिन्न फसलों के उत्पादन पर ज्योतिषीय प्रभाव का वर्णन करता है। आठवें अध्याय में साल के बारह महीनों में वर्षा की प्रकृति और अन्य मौसम संबंधी स्थितियों पर चर्चा की गई है। कार्तिक (अक्टूबर - नवंबर) के बारे में लेखक का कहना है कि इस महीने के दौरान विविध रंगों के बादल बिखरे हुए हैं नजर आते हैं। पोष में (दिसंबर - जनवरी) यदि आकाश बादलों से घिरा रहता है, तो एक बहुत अच्छा लक्षण है। यदि माघ का महीना (जनवरी - फरवरी) सामान्यतः ठंडा नहीं होता है (या कोई ठंढ नहीं है) तो फाल्गुन (फरवरी - मार्च) में उत्तर-पूर्वी हवाएँ अच्छी वर्षा लाती हैं।

मासि मासि कथं देवि कीदृशं गर्भलक्षणम्।
किं वातं किं घनं युक्तं कस्य कालेन वर्षति।।

कार्तिके शुक्ल नन्दायां पञ्चरुपाणि यो भवेत्।
अभ्राणि श्वेतवर्णानि रक्तर्णानि यो भवेत।।

पतिवर्णानि यो मेधा हि कृष्णवर्णश्च भवेत्।
कांस्यवर्णो भवेघस्तु ताम्रवर्णस्तथा भवेत्।।

न माघोपतितं शीतं ज्येष्ठे मूलं न वृष्टिकृत्।
नार्दायां पतितं तोयं दुष्टकालस्तदा भवेत्।।

तदा देवि भविष्यन्ति सुभिक्षं क्षेमवेव च।
पूर्वोत्तरजवातेन रात्र्यन्ते जलमुत्तम्।। मेघमाला, P. 14-38 ।।

मेघमाला के अध्याय IX में बादलों, हवाओं और बिजली पर चर्चा है। सबसे पहले, यह विभिन्न आकृतियों और बिजली की दिशाओं के साथ वर्षा के सहसंबंध पर चर्चा करता है। फिर हमें बताया गया है कि उत्तर-पूर्व की हवा समृद्धि के लिए प्रवाहकीय है, दक्षिण की हवा लोगों के लिए अच्छी है, दक्षिण-पश्चिमी हवा दुख का कारण बनती है, पश्चिमी चावल के उच्च उत्पादन के लिए बहुत फायदेमंद है, उत्तरीय हवा भी लोगों की भलाई के लिए अनुकूल है, और यह समृद्धि उत्पन्न करती है।

पूर्वे विधुत्करामेघा अग्नियां जलशोषिणी।
दक्षिणे रौरवं घोरं नैऋत्यां तापमादिशेत्।।

शुभिक्षं पूर्ववातेन जायते पात्र संशयः।
दक्षिणे तु क्षेमकरो नैऋत्यां दुः खदो भवेत।।

वारुण्यां दित्यंधान्यानि वायत्यांवायुखे भवेत्।
उत्तरे शुभदो देवि ऐशान्यां सर्वसम्पदः।। मेघमाला, P. 47-48 ।।

मेघमाला का अध्याय X बादलों के प्रसार से संबंधित है और बादलों की बारह प्रजातियों को दोहराते हुए, जिनका पहले से ही उल्लेख किया गया है, इसके अलावा एक और वर्गीकरण को शामिल किया गया है जिसमें सात प्रजातियां शामिल हैं जैसे कि अम्बुद, गोलक, गिरि, आरोपक, सपर्वत, खिखिन्द और कोटिवार ।

विश्वकोशीय तांत्रिक साहित्य भी जल विज्ञान पर जानकारी देने में पीछे नहीं है । अभिनवगुप्त के तंत्रालोक से, हम जलवायु विज्ञानं और मौसम संबंधी कुछ महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसके आह्निका में देशाध्व प्रकाशन में हवाओं, बादलो, हवाओं के मार्ग और संबद्ध घटनाएं (तांत्रलोक का V खंड) (त्रिपाठी , 1969) का वर्णन किया गया है। यह दस वायु पथो को संदर्भित करता है, जो शायद केवल इस पाठ के लिए विलक्षण हैं। वो दस वायु पथ हैं : 1- वितव 2- ऋतार्धि 3- वज्राइक 4- वैद्युतं 5- रैवत- 6- विषावर्त (दुर्जय) 7- परावह 8- आवह 9- महावह

और 10- महा परिवह (खंड V 121.138)। ये अंतरिक्ष में बढ़ती ऊंचाई के अनुसार व्यवस्थित होते हैं। उत्कृष्ट तांत्रिक कार्य ने दस प्रकार के बादलों को पहचाना है : 1- मूकमेघ 2. प्राणिवर्षी 3. विष्वारिवर्षी 4. स्कान्द 5. संवर्त 6. ब्राहम 7. पुष्कर 8. जीमूत 9. ईशक्रत, और 10- महेशिकृत (कपालोत्थ)। ये प्रकार भी बढ़ती ऊंचाई के अनुसार होते हैं । भारतीय साहित्य में ऐसा शायद पहली बार हुआ है जो बादलों को ऊंचाई के अनुसार स्थापित करता है। यह बताता है कि अलग-अलग प्रकार के बादल वायुमंडल में अलग-अलग स्तर पर होते हैं।

जैन साहित्य ने भी मौसम विज्ञान के क्षेत्र में काफी योगदान दिया हैं । 'प्रजापना'और 'अवसीका कुर्निस'विभिन्न प्रकार की हवाओं के लिए उत्कृष्ट संदर्भ प्रदान करते हैं (त्रिपाठी, 1969)। अवसीका कर्निस पंद्रह हवाओं की एक सूची प्रस्तुत करती है (9-7 / 913) जैसे: 1- प्राचीनवात (easterly) 2- उदीचीन (northerly) 3- दक्षिणवात (southerly) 4- उत्तर पौरस्त्य (northerly blowing from the front) 5- सवात्सुक (undefined) 6- दक्षिण पूर्व तुगर (southerly strong wind) 7- अपरदक्षिणबीजा, (blowing from the south-west) 8- अपरबीजाय (westerlies) 9- अपरोत्तगर्जन (north-westerly hurricane) 10- उत्तरसवात्सुक (unknown) 11- दिक्षण सवात्सुक 12- पूर्वतुंगर 13- दक्षिण और पश्चिम बीजाय 14- पश्चिमगर्जभ (western storm) 15- उत्तरीगर्जभ (northern strom) । इसी संदर्भ में बाद में बवंडर को कालिकावत के रूप में संदर्भित किया गया है- इस शब्दावली ने अरब भूगोलवेत्ताओं और नौसैनिकों को प्रभावित किया था और उन्होंने इनमें से कई भारतीय तकनीकी शब्दों को अपनी भाषा (मोतीचंद्र, 'सर्थवाह (हिंदी), पेज 202) में आसानी से समाहित कर लिया था।

'प्रजापना' में भी बर्फ़बारी (हिम) और ओलावृष्टि (करक) का भी संदर्भ है (I.16)। नेमीचंद्र के 'त्रिलोकसार' (अंश 679, पेज.280) में कहा गया है कि सात प्रकार के कालमेघ (आवधिक बादल) हैं। बरसात के मौसम में उनमे से प्रत्येक सात दिनों के लिए वर्षा करते हैं। फिर सफेद बादलों की बारह प्रजातियाँ हैं जिन्हें द्रोण कहा गया है । वे भी सात दिनों के लिए वर्षा करते हैं । इस प्रकार वर्षा ऋतू कुल मिलकर 133 दिनों की होती है ।

बौद्ध साहित्य भी मौसम विज्ञान पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता है। पहले जातक के आख्यान में, जिसका नाम 'अपन्नाका' है, कई जलवायु तथ्यों का वर्णन किया गया है। 'मिगालोपाजातक' (कोवेल, अंग्रेजी अनुवाद भाग III, पेज .164) में, दो प्रचंड तूफानों का उल्लेख कालवात (काली हवा) और बेरम्बरात (त्रिपाठी, 1969) के रूप में किया गया है । पहले वाले को ऊपरी हवा (संयुक्ता निकाया, अंग्रेजी अनुवाद XVII। 1-9, पेज .157) से संबंधित कहा जाता है। सुमेरु पर्वत पर अक्सर हिंसक तूफान आया करते थे (उत्पाटनवात या हरणवात) (महामोर्जाटक

संख्या 491, पेज .333; हरित जातक संख्या 431, पेज.497)। यह प्रवृत्ति में बवंडर जैसा दिखता है। 'मिलिंडा पन्हो 'में गर्म हवा या लू को वातातप कहा गया है (अंग्रेजी अनुवाद भाग II, IV, 6.35, पेज 86)। 'आर्यसुर' में चार प्रकार की हवाओं के के नाम हैं; नियतानिल (मानसून), चण्डानिल (टेम्पेस्ट), उत्पातवात(तूफान) और पश्चात्यवात (पश्चिम की ओर) (जातकमाला, एच. केर्न द्वारा सम्पादित 10.29, पेज 90, 127, 133)। 'विनय पिताका'(III, भाग .9.4, P.85) में, बवंडर को वातमनमंडलीका - कहा गया है । 'दिव्यवदना' तूफान के कुछ प्रकार को कालिकावात (भाग II, P.41), और वर्षा के साथ-साथ तूफान को वातवर्षम (भाग.II, P.163) कहा गया है । 'मिलिंदपन्हो '(IV.1.36) का कहना है कि चार प्रकार की वर्षा होती हैं : 1. बरसात के मौसम की, 2. सर्दी के मौसम की, 3. दो महीने आषाढ और श्रावण की (जुलाई और अगस्त), और 4. मानसून के बिना वर्षा। एक नज़र में, यह देखा जा सकता है कि वर्गीकरण पूरी तरह से वैज्ञानिक है।

बौद्ध साहित्य बादलों के दो सामान्य वर्गों को संदर्भित करता है जैसे: कालमेघ (मानसून बादल) और अकालमेघ (तूफानी बादल या संयोगवश वाले) (महावस्तु भाग.II, पेज.34, त्रिपाठी, 1969)। संयुक्ता निकाया ने बादलों को पाँच श्रेणियों में वर्गीकृत किया है (भाग .III, पुस्तक XI, 32.1.1, P.200), 1- शीतवलाहक (शांत बादल), 2 - उष्णवलाहक (गर्म बादल) 3- अभ्र वलाहक (गरजने वाले बादल, इसे क्यूम्यलस के साथ पहचाना जा सकता है) , 4- वातवलाहक (हवा के बादल - शायद वायुमंडल में संवहन धारा की गतिविधि के कारण बनने वाले बादल) और 5- वर्ष वलाहक (वर्षा के बादल - संभवतः क्यूम्यलोनिम्बस जो सबसे प्रचुर मात्रा में वर्षा लाता है)।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि जैन और बौद्ध ग्रंथों (400 ई.पू. से पहले) में बादलों और हवाओं का बहुत ही वैज्ञानिक वर्गीकरण है, जिनकी तुलना आधुनिक मौसम विज्ञान से की जा सकती है। इतने प्रारंभिक काल में सूक्ष्म निरीक्षण प्राचीन काल की एक स्वर्णिम उपलब्धि है।

वर्षा में विविधता

मत्स्य पुराण के अनुसार, बर्फ से आच्छादित पहाड़ों (हिमवत) के उत्तर और दक्षिण में पुण्ड्र बादल होते हैं जो वर्षा के भंडार को बढ़ाते हैं । वहाँ होने वाली सारी वर्षा बर्फ में परिवर्तित हो जाती है । हिमवत पर हवा अपने स्वयं के बल द्वारा उन बर्फ के गुच्छे को खींचती है और उन्हें महान पहाड़ों पर डालती है । हिमवत से परे कम वर्षा होती है (मत्स्य, I, 54.22-25)।

शकीरान सम्प्रभुज्वन्ति नीहार इति स मृतः।
दक्षिणेन गिरिर्योसौ हेमकूट इति स्मृतः।। मत्स्य **,I,54.22** ।।

उदगहिमवतः शैलस्योत्तरे चैव दक्षिणे।

पुण्डं नाम समाख्यात सम्वगवृष्टि विवृद्वये।। मत्स्य,I,54.23 ।।

तस्मिन प्रवर्तते वर्ष तन्तु षारसमुद्रभवम्।
ततो हिमवतो वायुर्हिमं तत्र समुद्रभवम्।। मत्स्य,I,54.24 ।।

आनयत्यात्मवेगेन सिज्वियानो महागिरिम्।
हिमवन्तमतिक्रम्य वृष्टिशेषं ततः परम्।। मत्स्य,I,54.25 ।।

इस प्रकार, तिब्बती पठार की अल्प वर्षा या शुष्क स्थिति का एक बहुत महत्वपूर्ण भौगोलिक तथ्य संदर्भित है। प्राचीन काल में भारतीयों द्वारा इस तथ्य का अध्ययन और ज्ञान वास्तव में उन प्राचीन भारतीयों की प्रशंसायोग्य है। लिंग पुराण (खंड ।, 36.38.39 और 49) कहते हैं, "यह पवन या वायु प्रवाह है जो धुएं और तापीय गतिविधि द्वारा जल से भरे हुए बादलों को बनाता है, ताकि पुस्कर और पक्षज बादल प्रचुर वर्षा दें सकें ”।

दन्दह्ययमानेषु चराचरेषु गोधूमभूतास्त्वथ निष्क्रमान्ति।
या या ऊर्ध्व मारुतेनेरिता वै तास्तास्त्वभ्रांयाग्निनावायुना च।।लिंग**,**I,36.38।।

अतो धूमाग्निवातांनां संयोगस्त्वमुच्यते।
वारीणि वर्षतीत्यभ्रमभ्रस्येशः सहस्त्रदृक्।। लिंग**,**I,36.39 ।।

विरिचोच्छ वासताः सर्वे प्रवहस्कंधजास्तः।
पक्षजाः पुष्कराघश्च वर्षाति च यदा जलम्।। लिंग**,I,36.49** ।।

आधुनिक मौसम विज्ञान हमें बताता है कि ध्रुवीय हवाएं वास्तव में उनके प्रभाव के वाले क्षेत्र फ़्लैंकिंग पोल या टुंड्रा में वर्ष में कभी भी वर्षा नहीं लाती हैं तथा केवल गर्मियों में उन स्थानों पर चलने वाली शक्तिशाली पश्चिमी हवाओं के कारण कुछ वर्षा होती है। पुराणिक पंक्ति में भी यही तथ्य बताया गया है,

ध्रुवेणाधिष्ठितो वायुर्विष्टिं संहरते पुनः।। मत्स्य**,**Vol.I,54.36 ।।

अर्थ: ध्रुव से हवा वर्षा को दूर भगाती है,

वराहमिहिर द्वारा लिखित वृहत् संहिता और मयूरासित्रका दो बहुत महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं जो जलवायु और मौसम संबंधी जानकारी से भरे हुए हैं। हालांकि वे ज्योतिषीय अनुमानो से भरे हैं, उनमे पर्याप्त वैज्ञानिक तथ्य भी हैं। वृहत् संहिता में जलवायु विज्ञान और मौसम विज्ञान पर

तीन अध्याय (21 वें, 22 वें और 23 वें) हैं और वे उनकी अपनी प्राचीन पारंपरिक शैली में विषय का वर्णन करते हैं । यहां केवल अध्यायों की मुख्य विशेषताएं प्रस्तुत की गयी हैं ।

वृहत संहिता के अध्याय 21 के श्लोक 23 एवं 24 वर्णन करते हैं कि बिल्कुल सफेद अथवा घने बादल जलीय जीवों जैसे विशाल मछली शार्क अथवा कछुओं के अनुकूल होते हैं। तथा प्रचुर वर्षा के स्रोत होते हैं।

मुक्तारजतनिकाशास्तमालनीलोत्पलज्जनाभासः।
जलचरसत्वाकारा गर्भेषु घनाः प्रभूतजलाः।। वृ.सं.21.23 ।।

तीव्रदिवाकरकिरणाभितापिता मन्दमारुता जलदाः।
रुषिता इव धाराभिर्विसृजन्त्यम्भः प्रसवकाले।। वृ.सं.21.24 ।।

श्लोक 31 उन स्थितियों या मौसम संबंधी अवयवों पर चर्चा करता है जो स्थानिक वर्षा के विस्तार को निर्धारित करते हैं, हालांकि आधुनिक मौसम संबंधी दृष्टिकोण में इसका कम महत्व प्रतीत होता है ।

पज्चनिमिन्तैः शतयोजनं तदर्द्वार्द्वमेकहान्यातः।
वर्षति पज्जनिमित्ताद्रूपेणैकेन यो गर्भः।। वृ.सं.21.31 ।।

अध्याय 22 से, यह ज्ञात होता है कि बेतरतीब और घने बादल प्रचुर मात्रा में वर्षा देते हैं जो कृषि के लिए बहुत है जीवनदायी होती है । इसी प्रकार, यदि पूर्व, दक्षिण और उत्तर में स्थित बादल क्रमशः दक्षिण, पश्चिम और उत्तर की ओर बढ़ते हैं, तो वे ठीक और प्रचुर वर्षा का कारण बनते हैं।

रविचन्द्रपरीवेषाः स्निग्धा नात्यन्तदूषिताः।
वृष्टिष्तदापि विज्ञेया सर्वसस्यार्थसाधिका।। वृ.सं.22.7 ।।

मेघाः स्निग्धाः संहताश्च प्रदाक्षिणगतिक्रियाः।
तदा स्यान्महती वृष्टिः सर्वसस्याभिवृद्वये।। वृ.सं.22.8 ।।

मयूराचित्रिका में, यह कहा गया है कि बिजली से रहित बिखरे हुए बादल लोगों के लिए हानिकारक होते हैं और जो लाल और रेशमी सफेद या सुनहरे या क्रुन्का पक्षी के रंग के होते हैं, जो वातावरण में सन्निहित होते हैं और बनावट में ऊन के समान होते हैं वो लोगों के लिए

हमेशा फायदेमंद होते हैं। पौष (दिसंबर-जनवरी) में कोहरे या धुंध की वजह से अच्छी वर्षा होती है। (सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, पुस्तकालय, पांडुलिपि संख्या 34332, पृष्ठ 36-37)।

पौषस्य कृष्णसप्तम्यां नभो विमलतारकम्।
स्वात्यां तुषारपातःस्यात श्रावणे तत्र वर्षणम्।।

वर्षा का निर्धारण करने वाली स्थितियों पर चर्चा करते हुए, कहा गया है कि अगर माघ (जनवरी-फरवरी) में कोई पाला नहीं पड़ता है, फाल्गुन में कोई तेज़ हवा (फरवरी - मार्च) नहीं , चैत्र (मार्च-अप्रैल) में कोई बादल नहीं, वैशाख (अप्रैल-मई) में कोई ओला-वृष्टि नहीं, ज्येष्ठ (मई-जून) में चिलचिलाती गर्मी नहीं, तो वर्षा के मौसम में अपर्याप्त वर्षा होती है (ऊपर पांडुलिपि, पृष्ठ 17 -18), अर्थात-

माघे हिमं न पतति वाता वान्ति न च फाल्गुने।
न च धूमायितं चैत्रे घनैर्नभस्ततं न तु।।

कारका मोच न वैशाखे शुक्रे चण्डातपो न हि।
तदातितुच्छा वृष्टिः स्यात् प्रावृष्टकाले न संशयः।।

यदि सुबह में सूर्य गर्म होता है, दिन के दौरान उसकी रोशनी पीले वर्ण की होती है और बादल ऊन जैसे और काले रंग के होते हैं, तो इसके परिणाम से अच्छी वर्षा होती हैं। इसी प्रकार, यदि सूर्य सुबह या उठने के समय गर्म होता है दोपहर के समय झुलसाने वाला होता है और बादलों का रंग पिघले हुए सोने जैसा होता है, तो वर्षा उसी दिन के दौरान होती है (उपरोक्त पांडुलिपि, पृष्ठ 18)।

प्रावृटकाले यदा सूर्यो मध्यान्हे दुः सहो भवेत्।
तद्दिने वृष्टिदः प्रोक्तो भृशं स्वर्णसमप्रभः।।

यदि पानी धुंधला दिखाई दे , बादल पहाड़ के आकार के हों, आवास साफ हों, आकाश का का रंग कौए के अंडे जैसा हो, वातावरण शांत हो और जलीय जानवर उच्च स्थान पसंद करते हों और अन्य तल में गायब हो जाएँ और जल चर तेज आवाज करते हों, तो बहुत अच्छी और प्रचुर वर्षा जल्द होती है (पांडुलिपि संख्या 34332, पृष्ठ 18)। इसके अलावा, अगर बादलों की बनावट तीतर के पंखों जैसी दिखती है तो वर्षा होती है।

यदा जलं च विरस गोनेत्र सन्निभिः।
दिशश्च विमलाः सर्वाः काकाण्डाभं यदा नभः।।

न यदा वाति तपनः पवनः स्थलं यदा।
शब्दं कुर्वन्ति मण्डूकास्तदा स्याद् वृष्टिकत्तमा।।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि मयूराचित्रिका ने वर्षा भिन्नता के पूर्वानुमान के लिए प्राकृतिक घटनाओं के अवलोकन और वर्णनात्मकता और दोनों के रिश्तों के सह के सम्बन्धों के माध्यम से सिद्धांतों को बनाने का प्रयास किया है। प्रकृति के दायरे के लक्षणात्मक वर्णन प्राय गणितीय सटीकता वाले कानूनों द्वारा नियंत्रित किया जाते हैं जिसमें चेतन का अंतर्ज्ञान (पक्षियों औरजानवरों) और घटनाओं के वैज्ञानिक कारण और प्रभाव संबंध सटीक आधार बनाते हैं, बशर्ते अवलोकन बहुत सावधानी से किया गया है। उन प्राचीन दिनों में, जब उन्नत मौसम विज्ञान और इसके जटिल संगणना, कंप्यूटर और अन्य साइबरनेटिक्स और सर्वो-मैकेनिक का ज्ञान नहीं था तब अज्ञात थे, यह विशेष महत्व का था और शायद एकमात्र तरीका था।

वर्षा का मापन

वर्षा के रूप में वर्षा की मात्रा आमतौर पर वर्षामापक में एकत्रित पानी के संचय से निर्धारित होती है; और कई प्रकार के मापक यंत्र नियमित रूप से इस काम के लिए लगाए जाते हैं। यह स्थापित करने के लिए पुख्ता सबूत हैं कि वर्षा मापने की प्रणाली मगध देश (दक्षिण बिहार) में मौर्य शासकों द्वारा चौथी या तीसरी शताब्दी ई.पू. में प्रारंभ की गयी और उन्हें पहली वेधशाला की स्थापना का श्रेय जाता है। छठी शताब्दी के अंत तक के शासकों द्वारा इस प्रणाली का प्रभावी ढंग से अभ्यास जारी रखा गया (श्रीनिवासन इत्यादि, 1975)।

मौर्य काल के दौरान, वर्षा मापक को वर्षामान के रूप में जाना जाता था- कौटिल्य ने इसके निर्माण का वर्णन इन शब्दों में किया है, "भंडार के सामने, एक कटोरा (कुंडा) जिसका मुंह एक अर्तिनी (२४ अंगुल = लगभग 18 इंच) चौड़ा वर्षा मापक (वर्षामान) के रूप में स्थापित किया जाएगा (अर्थशास्त्र , किताब, ॥ अध्याय V, पेज .56 शामाशास्त्री)। आधुनिक वर्षा मापक का एक योजना चित्र 3.2 में दिखाया गया है। प्राचीन भारतीय और साइमन के वर्षा मापक के आयामों की तुलना करके, उस अवधि के दौरान ज्ञान के स्तर के बारे में आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है।

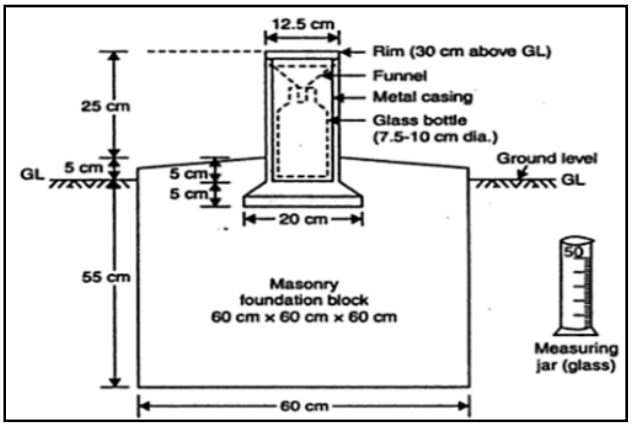

चित्र 3.2: साइमन वर्षा मापक (आधुनिक वर्षामापक) (स्रोत: रघुनाथ, 2006)

विभिन्न क्षेत्रों में वर्षा का वितरण उस समय अच्छी तरह से ज्ञात था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से एक संदर्भ का उल्लेख यहाँ किया जा सकता है: " जन्गिल्ला देश (रेगिस्तान के देश या जंगलों से भरे देश) में होने वाली वर्षा की 16 ड्रोन हैं; अनुपनम (नम देश) की तुलना में आधे से अधिक; वे देश जो कृषि के लिए उपयुक्त हैं (देशवापनम); अस्माकस (महाराष्ट्र) के देशों में 13.5 ड्रोन; अवंती में (शायद मालवा) 23 ड्रोन; तथा अपरान्तनम (पश्चिमी देश, कोंकण के देश); में विशाल मात्रा में हिमालय की सीमाओं और उन देशों में जहां जल- प्रणाली कृषि हेतु उपयोग की जाती है कौटिल्य के वार्षिक औसत मात्रा के संबंध में वर्षा क्षेत्रों के वर्गीकरण की विधि वास्तव में उल्लेखनीय है और वह एकमात्र शास्त्रीय लेखक हैं जिन्होंने संपूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप के लिये इस विषय के पहलुओं को संक्षेप में बताया है (श्रीनिवासन, 1975)। इससे, यह स्पष्ट है कि कौटिल्य द्वारा दी गई वर्षा की माप की पद्धति वैसी ही है जैसी आज हमारे पास है, एकमात्र अंतर यह है कि वह इसे कुल भार में व्यक्त करता है (अर्थशास्त्र, किताब, ॥ अध्याय XXIV, पेज 130) जबकि हम आजकल रैखिक माप का उपयोग करते हैं। वर्षा के भौगोलिक विवरणों पर चर्चा करते हुए, वह प्रेक्षित करता है कि "जब वर्षा की अपेक्षित मात्रा का एक-तिहाई, वर्षा ऋतु के प्रारंभ और समापन के महीनों के दौरान और दो तिहाई बीच में हो, तब वर्षा को बहुत अधिक समान रूप माना जाता है (सषमारूपम) ।

जैसा कि कृषि आवश्यकताओं के लिए उम्मीद की जा सकती है, वर्षा का पूर्वानुमान लगाने का विज्ञान अस्तित्व में था और अनुभवजन्य रूप से विकसित हो रहा होगा। आगे इसका उल्लेख करते हुए अर्थशास्त्र पुस्तक में कहा गया है कि इस तरह की वर्षा का पूर्वानुमान बृहस्पति की स्थिति, गति और गर्भ (गर्भदान), शुक्र के उदय, अस्त और गति, और सूर्य के प्राकृतिक या अप्राकृतिक पहलुओं की स्थिति को देखते हुए लगाया जा सकता है । शुक्र की चाल से, वर्षा का अनुमान लगाया जा सकता है ।

बादलों के वर्गीकरण और वर्षा और कृषि के परस्पर संबंध पर चर्चा करते हुए आगे यह कहा गया कि “कुछ बादल सात दिन तक लगातार वर्षा करते हैं ; और अस्सी वो हैं जो छोटी बूंदें डालते हैं ; और साठ वे हैं जो सूर्य चमक के साथ दिखाई देते हैं ”। जब हवा से मुक्त और सूर्यकी रोशनी के साथ अमिश्रित वर्षा होती है इससे तीन बार जुताई संभव हो , फिर अच्छी फसल काटना निश्चित है।

अष्टाध्यायी के लेखक, पाणिनी (700 ई.पू.) ने वर्षा के मौसम को प्रावृष (IV, 3.26; VI 3.14) और वर्षा के रूप में संदर्भित किया है । पूर्व वाला ऋतु का पहला भाग था। इन दो भागों को

पूर्व वर्षा और अपर वर्षा (अवयवादक्रृत: VII 3.11) के रूप में जाना जाता था। उन्होंने वर्षप्रमाण (III, 4.32) को भी इस प्रकार संदर्भित किया है:

वर्ष प्रमाण अलोपश्चास्यान्यतरस्याम्।। अष्टाध्यायी,III,4.32 ।।

वर्षा के मापन के लिए उदाहरणों का हवाला देते हुए पाणिनि आगे लिखते हैं गोष्पदपरं वृष्टो देव: (गाय के खुर से बने गड्ढे के बराबर वर्षा), सीता परं वृष्टो देव: नहीं (स्वदेशी हल के जोतने से बनी लीक को भरने के बराबर वर्षा)। यह स्पष्ट है कि गोष्पद सबसे कम वर्षा का मापक था।

कौटिल्य की तरह, कणाद और वराहमिहिर जैसे अन्य पूर्ववर्ती ग्रन्थ ने भी वर्षा मापक के पिता के उपकरण का वर्णन किया है और हमें बताया कि इससे वर्षा कैसे मापी जाए। अध्याय 23 के श्लोक 2 में, उन्होंने कहा है कि एक क्यूबिट मापने के लिए एक गोलाकार कटोरी का निर्माण (कुण्डकम) कर वर्षा की मात्रा को बताना चाहिए, यथा.

हस्तविशालं कुण्डकमाधिकत्याम्बुप्रमाणनिर्देशः।
पज्चाशत्पलमाढ़कमनेन मिनुयाज्जलं पतितम्। वृ.सं.23.2 ।।

उन्होंने वर्षा की गणना के लिए वह पाला, द्रोण और आढ़क (4 आढ़क = 1 द्रोण = 200 पल और 1 आढ़क = लगभग 7पाउंड) के वजन के उपायों को अपनाया । माप के लिए, वर्षा के वास्तविक समय के दौरान कटोरे में प्राप्त पानी को मापा जाना चाहिए। समय के अनुसार वर्षा के वितरण पर चर्चा 6,7,8 और 9 श्लोको में की गई है। वृहद संहिता के ये श्लोक विभिन्न चंद्र कलाओं में वर्षा की मात्रा को निर्दिष्ट करते हैं:

हस्ताप्यसौम्यचित्रापोष्णधनिष्ठासु षोडश द्रोणाः।
शतभिषगैन्द्रस्वातिषु चत्वारः कत्तकासु दशः।। वृ.सं.23.6 ।।

श्रवणे मघानुराधाभरणीभूलेषु दश चतुर्युक्ताः।
फज्गुन्या पज्चकृतिः पुनर्वसो विशंतिद्रोणाः।। वृ.सं.23.7 ।।

ऐन्द्राग्न्याख्ये वैश्वे च विशंति सार्पभे दश त्र्यधिका।
आहिर्बुध्न्यार्यम्णप्राजापत्येषु पज्चकृतिः। वृ.सं.23.8 ।।

पज्चदशाजे पुष्ये च कीर्तिता वाजिभे दश द्वौ च।
रौद्रेष्टादश कथिता द्रोणा निरूपद्रावेष्वेते।। वृ.सं.23.9 ।।

अध्याय XXXV में, उनका कहना है कि इंद्रधनुष की घटना वायुमंडल में बादलों के माध्यम से सूर्य की किरणों के वर्णक्रम विश्लेषण का परिणाम हैं (XXXV.1)।

सूर्यस्य विविधवर्णाः पवनेन विघाट्टिताः कराः साभ्रे।
वियति धनुः संस्थाना ये दश्यन्ते तदिन्द्रधनुः।। वृ.सं.35.2 ।।

पराशर प्राचीन वर्षामापक की युक्ति और वर्षा की मात्रा को मापने की विधि के बारे में जानते थे (वृहत् संहिता, अध्याय 21, गर्भलख्सनाध्याय) । अर्थात,

आढ़काज्श्चतुरो द्रोणानयां विघात् प्रमाणतः।
धनुः प्रमाणं मेदिन्यां विघाद द्रोणाभिवर्षणम्।।

चतुर्विशाड्. गुलानाहे द्विचतुष्काड. गुलोच्हिते।
भाण्डे वर्षाम्बुसंर्पूर्णे, ज्ञेयमाढकवर्षणम्।। वृ.सं. 21.32 से 21.33 तक।।

उपसंहार:

इस अध्याय में प्रस्तुत विभिन्न चर्चाओं से हमें पता चलता है कि मेघ निर्माण, वर्षा और इसके माप से संबंधित ज्ञान प्राचीन भारत में उच्च कोटि का था। वाष्पित जल का संघनन जो धूल कणों आदि की उपस्थिति से सुगम होता है (जो आधुनिक मौसम विज्ञान के अनुसार नाभिक के रूप में कार्य करता है), वर्षा के होने में यज्ञ, जंगलों, जलाशयों आदि के प्रभाव और बादलों का वर्गीकरण उनके रंग, वर्षा क्षमता आदि के साथ प्राचीन भारतीय साहित्य जैसे कि वेद, पुराण, वैश्यिका सूत्र, अष्टाध्यायी, और अर्थशास्त्र आदि में अच्छी तरह से वर्णित किया गया है। प्राकृतिक घटनाओं जैसे कि आकाश के रंग, बादल, बिजली, इंद्रधनुष आदि के आधार पर वर्षा का पूर्वानुमान उल्लेखनीय था। वर्षा मापने के लिए यंत्र विकसित किये गए थे और उनके सिद्धांत आधुनिक जल विज्ञान के समान थे सिवाय इसके कि मापन के लिए द्रोण, पल आदि के वजन को आधुनिक रैखिक माप के बजाय इस्तेमाल किया गया था।

सिंधु सभ्यता वर्षा में मौसमी विविधताओं और सिंधु बाढ़ को रोकने के तरीकों को खोजने में सक्षम थी। मौर्य काल के दौरान, भारत के विभिन्न क्षेत्रों में वर्षा के वितरण का वर्णन करना संभव था और उन्हें दुनिया भर में पहली वेधशाला की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। आधुनिक मौसम संबंधी तथ्यों जैसे तिब्बती शुष्क क्षेत्र में वर्षा छाया और ध्रुवीय हवाओं के कारण वर्षा न होने की, पुराणों में पूरी तरह से वकालत की गई है। जैन और बौद्ध कृतियों ने बादलों की वास्तविक ऊंचाई का अनुमान लगाया। मानसूनी हवाओं का ज्ञान और उनके प्रभाव की प्राचीन भारतीयों द्वारा कल्पना आधुनिक जल विज्ञान के अनुसार हैं। ये तथ्य बताते हैं कि भारत में प्राचीन काल में मौसम विज्ञान सहित जल विज्ञान और संबद्ध प्रक्रियाओं का समृद्ध ज्ञान था, जो आधुनिक जल विज्ञान के बराबर है।